Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

आंचलित उपन्यासः बबूल का सामाजिक सरोकार

डा० सुनील विक्रम सिंह[1] - आभा सिंह[2]

डा0 विवेकी राय का आंचलिक उपन्यास बबूल तीन पीढ़ियों की जीवन गाथा है। इस जीवन गाथा में एक तरफ पौराणिक परिवेश का उरेहण है तो दूसरी तरफ समाज का जीवन्त चित्रण। लेखक ने समाज दो पक्षों का उल्लेख किया जिसे शोषक और शोषित न कहकर बाबूसाहब और मजदूर नाम दिया गया है। ये कामगार चमार जाति के है। रोज कुँआ खोदना और रोज पानी पीना इनकी नियति है। लेखक ने इस उपन्यास में समाज की उन सभी मान्यताओं को नकारा है, जिसमें हमेशा परिवर्तन और विकास की बात स्वीकार की गयी है। यहाँ यह चित्रित है कि समाज में कुछ भी परिवर्तन नहीं हो रहा है, पीढ़ी दर पीढ़ी सारी स्थितियां यथावत है। प्रख्यात समाजशास्त्री मैकाइवर और पेज का मानना है ''समाज रीतियों, कार्य विधियों, अधिकार व पारस्परिक सहायता, अनेक समूहों तथा उनके विभाजनों, मानव व्यवहार के नियंत्रणों तथा स्वतंत्रताओं की व्यवस्था है। इस सदैव परिवर्तित होने वाली तथा जटिल व्यवस्था को ही समाज कहते हैं। यह सामाजिक सम्बन्धों का जाल है और सदैव परिवर्तित होता रहता है।'' Society is system of usage and Procedures of authority and mutual aid of many divisions of control of human behaviour and of liberties. This ever changing complex system we call society. It is not a work of social relationship and it is away changing.[3] मैकाइवर और पेज की समाज की मान्यता में समाज के पांच तत्व माने जा सकते हैं – कार्यविधि, अधिकार, पारस्परिक सहयोग, समूह तथा विभाजन और स्वतंत्रता, जबकि गिन्सवर्ग समाज का विश्लेषण करते हुए मानते है– 'Society is the collection of, Individual united by certain relation or modes of behaviour which work then off from others who do not enters in those reductions or who differ from them in behaviour.[4] तब ऐसा लगता है, जैसे समाज के लिए समूह की उपादेयता कम, उनके सम्बन्धों की उपादेयता अधिक है।

[1] असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, टी0डी0 कालेज, जौनपुर

[2] शोध छात्रा (हिन्दी विभाग), बयालसी पी0जी0 कालेज, जलालपुर, जौनपुर

[3] Maciver, R. M. and Page, C.H.- Society p. 3.

[4] Morrish Ginsberg sociology, p. 43.

किन्तु बबूल में समाज का वह नया रूप चित्रित है, जिसके बारे में कल्पना तक कर पाना संभव नहीं है। समाज आपसी तालमेल के सहारे जीवित रहता है। यहाँ तो महेशवा एकदम अकेला मस्तमौला और सारी समाज परकता उसके आगे पीछे चक्कर काट रही है।

यथार्थ जीवन दर्शन के 26 उपबन्धों में निबद्ध डा0 विवेकी राम के उपन्यास बबूल दो संस्कृति के सरोकारों से जुड़ा हुआ ऐसा फलक है, जिसमें रंग–रोगन का आकर्षण नहीं सहजता, संतोष और नियति का चमत्कार है। उपन्यास में केवल दो रूपों को जगत में स्वीकार किया गया है–एक है कर्म का मूर्तिमान रूप और दूसरा है नियति का बोध। यहां बरबस पूर्वजन्म के संस्कारों को मान ही लेना चाहिए। क्योंकि हम कहाँ जन्म लेगें किन परिस्थितियों में जन्म लेगें, यह तो कोई नहीं जानता। इतना अवश्य है कि जो पूर्व जन्म में अच्छा कर्म किया है, वह कहीं सम्पन्न घरानों में पैदा होते ही पाकेट में पासबुक लेकर पैदा होगा और बुरा कर्म करने वाला तो अभावग्रस्त परिवार में ही जन्म लेगा।

हमारी मान्यताओं के ठीक विपरीत कर्म को भी महत्ता देने वाले कुछ मनस्वी है जो इस जगत की नियति से कुछ दुःखी से है कि दिनरात कर्मरत प्राणी एक न एक दिन काम करते–करते बिना भोजन मिले पुनः जन्म लेने के लिए मर जाता है। अगले जन्म में वह कब कहाँ पैदा होगा, इससे एकदम अनजान। उपन्यास में यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि पूर्व जन्म और वर्तमान के कर्म का जीवन में कम ही महत्व है यदि महत्व है तो केवल नियति का, भाग्य का, यदि कर्म की प्रधानता का महत्व होता तो घुरबिन और महेशवा इस दशा को प्राप्त होते।

यह उपन्यास तीन पीढ़ी की जीवन गाथा है। उपन्यास का आरंभ घुरविन से होता है। घुरबिन गांव का सबसे गया गुजरा इन्सान है। अपनी पत्नी के साथ बाबू लोगों के यहाँ काम करते–करते उसका जीवन एक–एक दिन आगे की ओर खिसक रहा है। तीज–त्यौहार, मेले–उत्सव और आमोद–प्रमोद से इनका सिर्फ इतना ही मतलब है कि खाने को कुछ अच्छा मिल जाय वह भी पेट भरकर। उपन्यास में बाबू लोग से तात्पर्य खेतिहर उच्च जाति से लोगों से है। गाजीपुर जनपद में उच्चवर्गीय खेतिहर लोगों को आज भी बाबू या बाबू साहब कहने की प्रथा है। यहां निम्न जाति वर्ग के लोग आज भी बाबू लोगों के रहमोकरम पर जीवन यापन करते हैं। यद्यपि आज के इस परिवर्तित युग में किंचित परिवर्तन की संभावना की जा सकती है। किन्तु रोज कुंआ खोदना और रोज पानी पीने वाले लोगों के जीवन में सिर्फ इतना ही फर्क आया है कि मजदूरी कुछ अधिक मिलने लगी है, लेकिन उनकी यही नियति है कि मजदूर न मिले या श्रम न मिले तो बस फाकमस्ती। ऐसे में समय बदल रहा है, युग धर्म बदल रहा है, जीवन दर्शन बदल रहा है अगर कुछ नहीं, बदल रही है तो केवल नियति।

स्वर्ग धरती पर उतर गया है – प्रायः पैराणिक कथाएं और लोक कथाओं में यत्र–तत्र सर्वत्र यह कथा प्राप्त हो ही जाती है कि धरती स्वर्ग वासियों के लिए पर्यटन क्षेत्र है। कभी ऋषि मुनि तो कभी देवी–देवता यहाँ विहार करने या विचरण करने आते ही रहते है। धरती उनकी जिज्ञासा का

केन्द्र भी है। यहीं से उन्हें जीवन सत्य का अनुभव होता है और यहीं से प्रेरित होकर ये देवगण अपनी कार्यशैली निर्धारित करते हैं। यदि देवता और धरती वासियों में सृष्ट और सृष्टा का सम्बन्ध है तो यह भी मानना ही पड़ता है कि धरती का मनुष्य क्रिया है और जब यही मनुष्य स्वयं को कर्ता मानने की भूल करता है तो वही उसका अहंकार होता है क्योंकि व्यक्ति के हाथ में कुछ भी नहीं है। कर्ता–धर्ता तो सब ऊपर वाला है। व्यक्ति वही करता है जो ऊपर वाला उससे चाहता है – ''चाहत करत करावत सोई''। जीवन–मरण, हानि और लाभ कुछ भी व्यक्ति के हाथ में नहीं है –''हानि लाभ जीवन–मरण, जस अपजस विधि हाथ'' व्यक्ति कठपुतली की तरह हिलता डुलता रहता है और विधि का विधान पूर्ण होता जाता है। इस प्रकार कर्म ही व्यक्ति की विरासत और उसकी नैतिकता है। गीता में भगवान श्री कृष्ण ने इसी लिए तो कहा था – ''कर्मण्ये वादीकारस्ते।''

कर्म की मूर्तिमान प्रकृति महेशवा की तीन पीढ़ी उपन्यास में आंखों के सामने है – महेशवा का पिता घुरबिन स्वयं महेशवा और उसका बेटा सरला। यहाँ मुख्य भूमिका में महेशवा है किन्तु महेशवा के साथ–साथ लेखक ने उसके पिता और बेटे को भी कर्म की प्रतिकृति माना है। कर्म की गति को स्वर्ग में बैठे देवजन भी देख रहे होते हैं, लेकिन कर्म का लेखा–जोखा और निर्णय करते कराते प्रायः संवेदना में कमी सी आ जाती है, क्योंकि यह उनका नैतिक कर्म सा हो जाता है।

मुख्य कथा महाराज चित्रगुप्त और उनके निजी सहायक प्रबुद्धशील भी है। प्रबुद्धशील कवि हृदय है, यही कारण है कि उनमें संवेदनाशीलता बहुत अधिक है। उनके सम्मुख महेशवा की फाइल है और उसकी फाइल की स्थिति से वे एकदम से द्रवीभूत है। अमीरी और गरीबी की पराकाष्ठा देखकर उनके मन में महेशवा के प्रति गहरी सहानुभूति है। उनकी दया देखकर चित्रगुप्त जी पहले तो उन्हें समझाने का प्रयास करते है किन्तु प्रबुद्धशील के तर्क के आगे उनका तर्क कुछ कमजोर सा पड़ने लगता है। उनका महेशवा के प्रति सहानुभूति और दिन दशा को देखकर वे प्रबुद्धशील को धरती पर महेशवा के पास भेजते हैं। प्रबुद्धशील प्रसन्न थे कि वे महेशवा के भाई के रूप में उसके साथ रहता है किन्तु उसमें चित्रगुप्त जी ने असमर्थता जतायी और एक अध्यापक के सपने महेशवा के गांव बाढ़नपुर में प्रस्तुत कर दिये। प्रबुद्धशील जी प्रसन्न थे क्योंकि महेशवा के सन्निकट होने का उन्हें अवसर मिला था। प्रबुद्धशील जी डायरी लिखते थे और यह उपन्यास उनकी डायरी के पचीस वर्ष में लिखे गये 26 प्रतिनिधि पृष्ठ को लेखक ने महेशवा की जीवन गाथा में समाहित किया है। इस प्रकार गरीबी और अमीरीं के साथ कर्म का साहचर्य निरूपित करने के लिए प्रबुद्धशील जी स्वर्ग से धरती पर आ गये और इस उपन्यास का विचारक आज कर्म पर नहीं प्रारब्ध पर विश्वास करने को विवश हो गया है।

प्रारब्ध के समक्ष सभी विवश है। चाहकर भी कोई प्रारब्ध परिणाम में परिवर्तन नहीं कर सकता। धरती का वासी आखिर कुतूहल का विषय क्यों

बन जाता है। जब मनुष्य को अपने कर्म का फल भुगतना ही पड़ेगा तो फिर स्वर्गवासी मनुष्य के विषय में दिलचस्पी लेने, विहार करने तथा मनोरंजन करने के लिए यहां क्यों आ जाते है। प्रबुद्धशील जी धरती पर आये, आकर उन्होंने क्या किया। महेशवा के जीवन में उनके आने से क्या फर्क पड़ गया। हम यह अवश्य मान सकते है कि उन्होंने महेशवा के जीवन को अपनी डायरी का विषय बनाया। हो सकता है कि लेखक ने वह डायरी पढ़ ली है और उसी को लिपिबद्ध कर दिया हो। महेशवा के जीवन को, उसके जीवन दर्शन को उसकी जीवन पद्धति को परिवर्तित करने की क्षमता न तो प्रबुद्धशील में ही थी और न ही लेखक की। यदि यह क्षमता दोनों में से किसी के भी पास होती, सम्भवतः यह आंचलिक यथार्थपरक उपन्यास स्थित रूप से आदर्श आंचलिक रहा होता। महेशवा बबूल है, बबूल की जाट पर ही कुम्हार के चाक का केन्द्र अवस्थित रहता है। चाक इस धरती का रूप है। जैसे चाक पर बर्तनों का संसार निर्भर रहता है, वैसे ही इस धरती का रूप इस मेहनतकश महेशवा पर आश्रित है। यह एक महेशवा की गाथा ही नहीं है यह तो धरती की नियति है। यहाँ एक ही नहीं महेशवा ही महेशवा है, यह कहें कि धरती ही महेशवा से बनी है। यह महेशवा ही धरती के केन्द्र में है। धरती इसी महेशवा जैसे लोगों पर ही केन्द्रित है, संचालित है। महेशवा की जीवन गाथा वह पवित्र कथा है जिसे महात्मा तुलसीदास जी ने भगवान श्री राम के चरित्र की विशेषता कही थी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी। महेशवा की जीवन गाथा को निरूपित करके प्रबुद्धशील भी अत्यन्त संवेदनशील हो गये और डॉ0 विवेकी राय डायरी का कथा का परिवर्तन समाज शाश्वत इकाई है। यहाँ न जाने कितने लोग आते जाते रहते है, लेकिन समाज की यह सच्चाई उभर कर सामने आयी है कि दीन दलित की दशा में कोई परिवर्तन कभी नहीं आता। उसका कुछ नहीं बदलता, कभी उसकी अशिक्षा कभी उसका अन्धविश्वास, कभी उसकी आवश्यकता, कभी मानसिकता और कभी उसकी जीवनपद्धति उसके पारंपरिक रूप को जीवन्त बनाती रहती है। समाज के एक पक्ष की यह दशा तथा दूसरा पक्ष वह है जो इन्हीं मजदूर वर्ग के जीवन को सीढ़ी समझता है और उसे कुचलता हुआ ऊपर की ओर बढ़ता जा रहा है। उच्च और निम्न वर्ग का यह सामाजिक सरोकार डा0 विवेकी राय के उपन्यास बबूल में प्रतिदर्शित है।